WORLD TRANSLATION

A International Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal

E-mail : worltranslation04@gmail.com

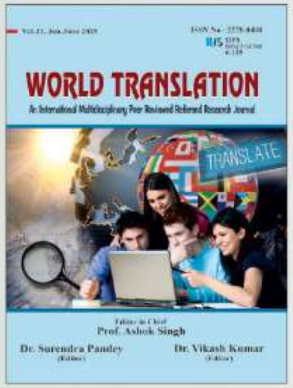

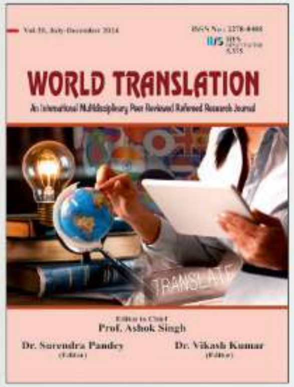

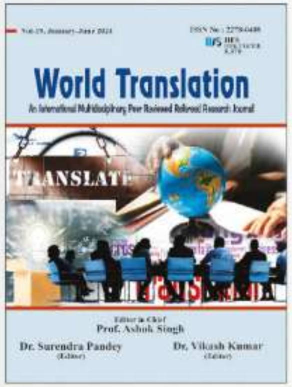

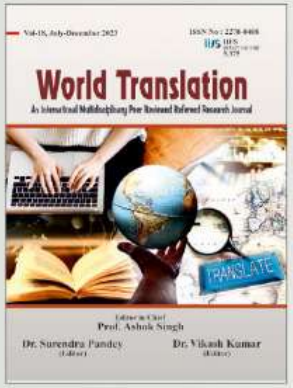

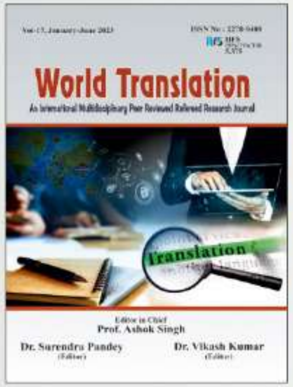

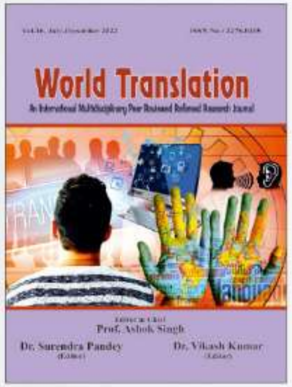

Published By : Akhand Publishing House, Delhi (India)
L-9/A, First Floor, Street No.42, Sadatpur Extension, Delhi
Email: akhandpublishing@yahoo.com

World Translation
An International Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal

Vol-22, July-December 2025

Vol-22, July-December 2025

ISSN No : 2278-0408
IIFS IMPACT FACTOR 6.125

WORLD TRANSLATION

An International Multidisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal

Editor in Chief
Prof. Ashok Singh

Dr. Surendra Pandey
(Editor)

Dr. Vikash Kumar
(Editor)

Vol. 22 July– December. 2025 ISSN: 2278-0408 IIFS Impact Factor: 6.125

WORLD TRANSLATION

[An International Multidisciplinary Peer Reviewed
Refereed Research Journal]

Chief Editor
Prof. Ashok Singh

Editors
Dr. Surendra Pandey
Dr. Vikash Kumar

Published by
Akhand Publishing House, Delhi (India)
L-9/A, First Floor, Street No.42, Sadatpur Extension, Delhi
Mob. 9968628081 Email: akhandpublishing@yahoo.com

Peer Reviw Policy :

This journal follows single blind peer review policy. Each paper is evaluated by two refrees. The responsibility of the facts given and opinions expressed in articles of journal is solely that of individual author and not to the publisher.

Publication Date : 31 December 2025

Email: worldtranslation04@gmail.com,
Website: https://worldtranslation.in/
Mobile No. 9451173404, 9470828492

Chief Editor

Prof. Ashok Singh
Ex-Vice Chancellor, Sant Gahira Guru Vishwavidyalaya, Sarguja, Ambikapur, Chhattisgarh

Editor

Dr Surendra Pandey
Assistant Professor, Department of Hindi, Kooba P.G. College, Dariapur, Newada, Azamgarh

Dr Vikash Kumar
Assistant Professor, Department of Hindi, Shri Varshney College, Aligarh, U.P

Deputy Editor

Dr Santosh Bahadur Singh
Assistant Professor, Department of English Lady Irwin College, University of Delhi

Dr Ritu Varshney
Assistant Professor, Department of Hindi, Kirori Mal College, University of Delhi

Dr. Sudhir kumar Sah
Assistant Professor, Department of Commerce, BNMU University, Madhepura

Executive Editor

Dr Varsha Singh
Associate Professor
Department of English
Deshbandhu Collge, University of Delhi

Dr Seema Singh
Assistant Professor, Department of Hindi Indraprastha Mahila Mahavidyalaya, University of Delhi

Dr Lal Singh
Assistant Professor, Department of Law, Shri Varshney College, Aligarh

Sub Editor

Dr Arun Kumar Mishra
Assistant Professor, Department of Hindi, M.D.P.G. College, Pratapgarh

Dr Manoj Kumar Singh
Assistant Professor, Department of Hindi, Central University of Odisha, Koraput

Dr. Deepak
Assistant Professor,
Ancient History Department,
Kooba P.G. College, Dariyapur, Nevada Azamgarh, U.P.

Managing Editor

Dr Satendra Kumar
Assistant Professor, Department of Hindi, Shri Varshney College, Aligarh, U.P

Lavlesh kumar Vishwakarma
Assistant Professor / Joint Coordinator IQAC, Baikunth Teachers' Training College, Amlori, Siwan (Bihar)

Legal Advisor

Dr. Mukesh Kumar Malviya
Assistant Professor, Department of Law, Kashi Hindu Vishwavidyalaya, Varanasi

विषय-सूची
Contents

PART–I

1. योग भारतीय संस्कृति की पहचान प्राचीन युग से आधुनिकता की ओर : एक अध्ययन 3
—अनुराधा

2. ''भारत में महिला सशक्तिकरण: नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023'' के विशेष संदर्भ में 8
—जय प्रकाश मिश्रा

3. ''रूस और यूक्रेन युद्ध: तृतीय विश्व युद्ध की आहट'' 19
—जय प्रकाश मिश्रा

4. धर्म और पर्यावरणः पर्यावरण संरक्षण में बौद्ध धर्म की शिक्षाओं व सिद्धान्तों की समकालीन प्रासंगिकता 27
—अंजू कुशवाहा

5. रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में प्रकृति-चित्रण 31
—डॉ. अरुण कुमार मिश्र, श्याम सुन्दर पांडे

6. ग्रामीण और शहरी क्षेत्र के प्रारम्भिक स्तरीय मातृ-पितृ विहीन बालक-बालिकाओं के व्यक्तित्व एवं संवेगात्मक वंचन का अध्ययन 40
—डॉ. जीतेंद्र प्रताप , लवलेश कुमार विश्वकर्मा

7. निराला के काव्य में प्रयोगधर्मिता के विविध रूप 51
—डॉ. मुनिल कुमार वर्मा

8. साहित्यक उपन्यास 'पुनर्नवा' में नारी अस्मिता: एक सम्यक अध्ययन 58
—प्रतिभा कुमारी

9. प्रयाग कुम्भ: तीर्थाटन एवं अर्थोन्नयन 62
—प्रोफेसर (मेजर) विमलेश कुमार पाण्डेय

10. स्मृतियों का सम्यक दर्शन 66
—डॉ. रजनीकांत राय

11. प्रभावशाली संचार हेतु आचार्य चाणक्य के संचारीय मूल्य 70
—डॉ. रविंद्र सिंह, अजयकुमार

12. साहित्य में मीरा और स्त्री लेखन 77
—डॉ. मंजु रानी

13. 'परछाइयों का समयसार' उपन्यास में स्त्री मनोविज्ञान: अंतर्द्वंद, अस्मिता और मुक्ति का अन्वेषण 81
—अलीशा

14. 21 वीं सदी के तृतीयपंथी जीवन संबंधी उपन्यासों में 'पहचान का प्रश्न' 92
—सुनीता कुमारी

15. फादर कामिल बुल्के और उनकी रचनाएँ: एक परिचय 96
—डॉ. विवेकानंद तिवारी

16. प्रेमचन्द की कहानियों में वर्णित कुरीतियाँ 104
—सविता

17. प्रसाद के नाटकों में सांस्कृतिक गौरव और आत्मबोध (स्कंदगुप्त के विशेष संदर्भ में) 109
—डॉ. शालिनी सिंह

18. शिवप्रसाद सिंह के साहित्यिक एवं आंचलिक कथाओं में आधुनिक परिवेश 115
—वीरेन्द्र पाल, प्रो. मीरा कश्यप

19. पारिवारिक वातावरण का छात्रों के व्यक्तित्व एवं शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव 123
—अभिषेक कुमार, डॉ. परमानन्द त्रिपाठी

20. आर्ष महाकाव्यों में आदर्श राज्य व्यवस्था 128
—डॉ अवनीश कुमार दुबे

21. ग्रामीण समाज में ई-शासन की चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ:
वसुधा केंद्र पर आधारित एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 135
—डॉ. रवि शंकर सिंह

22. भारतीय सांप्रदायिक समस्या एवं 'काला जल' 147
—डॉ. राकेश कुमार रंजन

23. माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं समस्या समाधान योग्यता निर्धारण में योगाभ्यास की भूमिका का अध्ययन 152
—रूमा कुमारी, डॉ. अर्चना शर्मा

24. शराबबंदी के बाद दलित महिलाओं में नेतृत्व चेतना का विकास लिंग और जाति के अंतर्संबंधों की पड़ताल 158
—डॉ. विद्या कुमार चौधरी, बबली कुमारी

25. बिहार राज्य के दरभंगा ज़िले में मखाना उद्योग में कार्यरत कर्मियों की समीक्षा एवं उनकी दिशा- दशा का समालोचनात्मक अवलोकन 165
—अमन कुमार

26. स्वातंत्र्योत्तर आंचलिक हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक शोषण, असमानता और संघर्ष का यथार्थवादी चित्रण 172
—असित कुमार मिश्र

27. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के काव्य में नारी की मनोदशा 177
—डॉ. सुरेन्द्र पाण्डेय

28. साहित्य का समाज पर दृष्टिगत प्रभाव 182
—डॉ. विकास कुमार

29. अवधी लोकगीतों में अभिव्यक्त लोकजीवन 185
—डॉ. सीमा सिंह

30. दिनकर के काव्य में नारी दृष्टि के विविध आयाम 197
—मनीष यादव

31. भागलपुर जिले की मलिन बस्तियों में निवासरत बच्चों की शिक्षा पर सामाजिक-आर्थिक कारकों का प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन 204
—कुमारी नीतू

32. महिला उद्यमिता का विकास: चुनौतियाँ, अवसर और सरकारी योजनाओं की भूमिका 209
—जितेंद्र कौशिक

33. छत्तीसगढ़ी साहित्य में अभिव्यक्त षोषण एवं अत्याचार 222
—श्रीमती डॉ. माग्रेट कुजूर

शिवप्रसाद सिंह के साहित्यिक एवं आंचलिक कथाओं में आधुनिक परिवेश

वीरेन्द्र पाल
शोधार्थी, के0जी0के0 (पी0जी0) कॉलेज, मुरादाबाद
प्रो0 मीरा कश्यप
शोध निर्देशिका, विभागाध्यक्ष, हिन्दी, के0जी0के0 (पी0जी0) कॉलेज, मुरादाबाद

बीसवीं शताब्दी के ठीक मध्य से (1950-51) हिन्दी कहानी में एक परिवर्तन दिखायी पड़ता है। कहानी के इस परिवर्तित स्वरूप ने नवीन जीवन दृष्टि नया आधुनिक बोध एवं नये शिल्प के कारणवश सबका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। कहानी की इस नयी प्रवृत्तियों को लक्ष्य बनाकर उसे 'नयी कविता' के आधार पर 'नयी कहानी' कहा जाने लगा। नयी कहानी का आरम्भ हिन्दी में ग्राम जीवन अथवा भारतीय कृषक जीवन को लेकर लिखी गयी ग्राम कथाओं से होता है और इस सिलसिले में शिवप्रसाद जी की कहानी का उल्लेख किया जाता है। जो 1951 में प्रथम बार प्रकाशित हुई। शिव प्रसाद सिंह अपनी प्रारम्भिक कहानियों से एक कहानीकार के रूप में बहुचर्चित और बहुप्रसंशित हुए। यहाँ इनकी कथा यात्रा के क्रमिक विकास पर एक विहंगम दृष्टि डाल लेना आवश्यक है- इनका सन् 51 से 53 तक की प्रारम्भिक कहानियों का संग्रह 'आर पार की माला' नाम से जून 1955 में काशी से प्रकाशित हुआ। इसमें जिन कहानियों का संग्रह हुआ है वे इस प्रकार है- 1. नयी पुरानी तस्वीरे 2. बरगद का पेड़ 3. हीरो की खोज 4. महुवे का फूल 5. दादी माँ 6. देऊ दादा 7. मंजिल और मौत 8. मास्टर सुख लाल 9. कबूतरों का अड्डा 10. उस दिन तारीख थी 11. पोषाक की आत्मा 12. चितकबरी 13. उसकी भी चिट्ठी आयी थी 14. मुर्गे ने बाग दी 15. उपाइन मैया 16. आर-पार की माला।

इस कहानी संग्रह में गाँधीवाद ओर आदर्शवादी प्रभाव के अमुक्त अमोहभंग की स्थिति का उत्तर जमींदार युग में रूपायित हुआ है, जहाँ आधुनिकता अभी आँखे खोल रही है। डॉ0 शिवप्रसाद सिंह ग्राम कथाकारों के रूप में अधिक जाने जाते हैं। इनकी कहानियाँ गाँव के उस वातावरण की प्रतिनिधि रचना है, जहाँ दीनता, विपन्नता और अन्धविश्वास की जड़े गहरायी में जमी है, गरीबी और गन्दगी उसे खाद देती है किन्तु पारिवारिक स्नेह, सहज विनोद और प्रकृति की सुषमा इसमें प्रसून की तरह खिला करती है। गाँव का परिवेश इसकी अनुभूतियों का भंडार है और उससे इसका रागात्मक लगाव है। इसे वे स्वयं स्वीकार करते हुए कहते हैं- मेरी जिन्दगी में गाँव एक ऐसी हकीकत है जिसे मैं चाह कर भी कट नहीं सकता, गाँव की अछोर हरियाली में डूबे सीमान्त फसलों के रंग-बिरंगे गलीचे बिछाकर किसी अनागत की प्रतीक्षा में डूबी धरती, सरसों, जलकुम्भी और झरबेरी के जंगली फूलों से मदहोश वातावरण के बीच अपनी सामान्य जिन्दगी के लिए संघर्षरत किसान मेरी कहानियों के अविभाज्य अंग है। शहर के जीवन में जहाँ एक ओर आधुनिकता बोध को निरन्तर तीव्र और सक्रिय बनाता है, वही गाँव के जीवन की धड़कने जो अब भी सड़ी गली परम्परा और कूटस्थ रूढ़ियों का कूड़ा-कचरा ढोती हुई कराह रही है मेरे कहानीकार के लिए सदा की चुनौती रही है।[1]

इस संग्रह की कहानियों में अनुभूति जन्य सच्चाई और गहराई का समावेश ही इसकी सर्वप्रथम विशेषता है। एक भी कहानी में यह नहीं लगता कि कहानीकार महज किसी काल्पनिक कथानक को सजा-संवारकर प्रस्तुत कर रहा है। आर-

पार की माला कहानी में कबीले या उपेक्षित जन समूह के चित्रण से नयी कहानी में जो संवेदना का नया आयाम खुला था उसका प्रमाण देखा जा सकता है जिसमें नट जैसी उपेक्षित जाति के जीवन का यथार्थ और प्रमाणिक चित्रण किया गया है। डॉ0 बच्चन सिंह के अनुसार आर-पार की माला में विवशता, घर, लाचारी का अतिशय मर्मस्पशी चित्रण है। इसमें टेंशन नहीं आस्था का कोई मुखर स्वर नहीं है फिर समूची कहानी उस व्यवस्था के प्रति एक तीखा विक्षोभ उत्पन्न करती है। जो अपने जबड़े में लहलहाती मासूम जिन्दगी को जिन्दा निगल जाती है। इन कहानियों में लेखक का परिपेक्ष बदला हुआ है। प्रवृत्ति की दृष्टि से ये कहानियाँ रोमांटिक यथार्थ और युगीन संक्रमण की कहानियों की कड़ियाँ मानी जा सकती है।[2]

डॉ0 शिवप्रसाद सिंह की कहानियों का दूसरा संग्रह कर्मनाशा की हार 1958 में प्रकाशित हुआ। इसमें 16 कहानियाँ संग्रहित है जो निम्नलिखित है- 1. कर्मनाशा की हार, 2. प्रायश्चित, 3. पापजीवी, 4. केवड़े का फूल, 5. बिन्दा महाराज, 6. कहानियों की कहानी, 7. वशीकरण, 8. उपहार, 9. सँपेरा, 10. भग्न प्राचीर, 11. शहीद दिवस, 12. हाथ का दाग, 13. माटी की औलाद, 14. गंगा तुलसी, 15. बिना दीवारों का घर, 16. रेती।

इस कहानी संग्रह में कहानीकार की कहानी यात्रा के विकास क्रम को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। इन कहानियों में एक ओर जहाँ वस्तु-भाव की नवीनता है वही शैली में नया सौन्दर्य और अर्थपूर्ण कलाकारिता के दर्शन होते हैं। इस कहानी संग्रह में लेखक समाज के अनदेखे, अस्वस्थ और उपेक्षित अंग को कला की कलम से छूकर पनपने देता है। मुसहर, बिन्दा महाराज, हिजड़ा गुलाबी, मजूरिन वशीर, सँपेरा, टीगल कुम्हार आदि जिन्दा पात्र उछल कर ऊपर आ जाते हैं।

इस संग्रह की भूमिका में लेखक ने मनुष्य के जीवन के प्रति अपनी प्रतिबद्धता इस प्रकार स्पष्ट की है- "मनुष्य और उसकी जिन्दगी के प्रति मुझे मोह है, जो अपने अस्तित्व को उबारने के लिए विविध क्षेत्रों में विरोधी शक्तियों से जूझ रहा है। अन्धविश्वास, उपेक्षा, विवशता, प्रताड़ना, अतृप्ति, शोषण, राजनीतिक भ्रष्टाचार और बुद्ध स्वार्थान्धता के पीछे पिसता हुआ भी जो अपने सामाजिक और मनोवैज्ञानिक हक के लिए लड़ता है, हँसता है, रोता है, बार-बार गिरकर भी अपने लक्ष्य से मुँह नहीं मोड़ता, वह मनुष्य तमाम शारीरिक कमजोरियों और मानसिक दुर्बलताओं के बावजूद महान है।[3] कहानी में प्रवाहित वह जीवन की शक्ति ही आज की कहानी के प्रति पाठक को आस्थावान बनाती है।

शिवप्रसाद सिंह का तीसरी कहानी संग्रह भी 'इन्हें भी इंतजार है' 1961 में प्रकाशित हुआ। इसमें 20 कहानियाँ निम्नलिखित है- 1. नन्हों, 2. बेहया, 3. मरहला, 4. इन्हें भी इंतजार है, 5. टूटे तारे, 6. सुबह के बादल, 7. आखिरी बात, 8. बहाववृत्ति, 9. उधूल और हसी, 10. शाखा मृग, 11. परकटी तितली, 12, पैटमैन, 13. टूटे शीशे की दीवार, 14. खैरा पीपल कभी न डोले, 15. कर्ज, 16. अन्ध कूप, 17. धतूरे न डोले, 18. आँखे, 19. बीच की दीवार।

इस संग्रह की सभी कहानियाँ लगभग राजनैतिक, सामाजिक परिवेश की उपज है जिसमें कर्मनाशा की हार संग्रह की कहानियाँ लिखी गयी। इस संग्रह की कहानियाँ शिल्प की अभिनवता और मनोवैज्ञानिक चित्रण की दृष्टि से पहले लिखी गयी कहानियों से अधिक सशक्त, प्रौढ़ और मार्मिक है। इसमें ग्राम कथानक शिल्प की अन्तररसता और प्रजातांत्रिक दीप्ति है।

इस संग्रह की सभी कहानियों के मुख्य पात्र किसी परखने वाली आँख के इन्तजार में थे और इस कर्तव्य को पूरा निभाया है शिवप्रसाद सिंह ने। कहानीकारों ने उन पात्रों को केवल सूक्ष्म दृष्टि से देखा ही नयी वरन् औरों को इन्हें दिखाने का प्रयास किया है। इस दिशा में उनकी लेखनी ने भी उनका पूरा साथ दिया है। इस कहानी संग्रह की कहानियाँ एक प्रकार की जीवन्त रेखाचित्र है जिन्हें अपनी कला तूलिका से लेखक ने बहुत ही संयम और सावधानी से चित्रित किया है। भाषा बहुत ही सरल, बहुत से स्थायी शब्द सरल, बहुत से स्थानीय शब्द प्रयोगों में सजी होने के कारण आकर्षक एवं चतुली हो

उठी है। प्रत्येक कहानी में एक मीठा परन्तु चुटीला व्यंग्य है।

कथाकार शिव प्रसाद सिंह की दृष्टि परिवार के अन्तर्वैयक्तिक सम्बन्धों की ओर विशेष रही है। इस संग्रह को देखने से सिद्ध होता है कि ग्रामीण वातावरण के निर्माण में लेखक को सर्वत्र अद्भुत सफलता मिली है। लेखक गाँव के जीवन के इतने रूपों एवं पहलुओं से परिचित है कि ये वर्णन आश्चर्य में डाल देते हैं। वस्तुतः शिवप्रसाद जी ऐसे प्रबुद्ध और संवेदनशील कथाकार है जो जीवन के मार्मिक यथार्थ को कलात्मकता से स्पर्श कर उसे मंगलमय बना देने की ओर उन्मुक्त है।[4] इस संग्रह की प्रत्येक कथा एक मार्मिक प्रसंग है और भारतीय अभिशप्त जीवन की हकीकत प्रकट करती है। लेखक का प्रत्येक वाक्य प्रभाव निर्माण का अचूक शास्त्र है। यह शैली अनुभव की गरिमा से आवृत्त है एक सजीव छन्द है। उसमें विराट सहानुभूति का परिष्कृत और संयत रूप दृष्टिगोचर होता है। प्रत्येक कहानी उच्चकोटि के गद्य का सजीव और प्राणमय नमूना है।[5] इस संग्रह से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका लेखक मात्र कथाकार ही नहीं शिल्पकार भी है, जो अपने विचारों और अनुभूतियों को शिल्प की पूरी सूक्ष्मताओं के साथ रखता है और पाठक पर उसकी छाप छोड़ जाता है। ....लेखक उपमाओं का धनी है। उपमानों के कारण कथ्य सवत्र अधिकतम तीव्र रूप में उपस्थित हुआ है।[6]

इस संग्रह की कहानियाँ प्रेमचन्द की परम्परा में नूतन क्षितिज का उद्घाटन करती हुई प्रतीत होती है।

डॉ0 शिवप्रसाद सिंह का चौथा कहानी संग्रह मुरदा सराय सन् 1966 में भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुआ। इसमें कुल 12 कहानियाँ हैं- 1. ताड़ी का पुल, 2. अरून्धती, 3. मैं कल्याण और जहाँगीरनामा, 4. प्लास्टिक का गुलाब, 5. किसकी आँखे, 6. धारा, 7. चेन, 8. अंधेरा हँसता है, 9. जंजीर फायर ब्रिगेड और इंसान, 10. यात्रा सतह के नीचे, 11. मुरदा सराय, 12. तबाकी।

इस कहानी संग्रह में आधुनिकता-बोध का सम्यक् विस्फोट हुआ है और विक्षोभ, तीखापन, तनाव और कड़वाहट चरम सीमा तक पहुँच गयी है।[7] संग्रह की भूमिका- 'कुछ न होने का कुछ' में कहानीकार ने अपनी रचना प्रक्रिया को स्पष्ट करने का प्रयास किया है, जिसका महत्व संकलन की कहानियों में किसी माने में कम नहीं है। 'ताड़ीघाट का पुल' तथा 'अरून्धती' शीर्षक प्रारम्भिक कहानियों में समाज और इकाई के बीच का संघर्ष उभारा गया है। इस संग्रह की शीर्षक कथा 'मुरदा सराय' में केन्द्रीय तत्व संत्रास है। इसमें जीवन-बोध बनाम मृत्युबोध संवेदित है। इस कहानी में जीवन का प्रतीक घर है और मृत्यु का प्रतीक श्मशान है। 'मुरदा सराय' दोनों के बीच में है, जहाँ वीभत्स भयानक सृष्टि के साथ संवेदनीय सूक्ष्म श्रृंगार स्थिति का सामंजस्य कथाकार की एक अतिरिक्त उपलब्धि है।

इस प्रकार 'मुरदा-सराय' कहानी संग्रह बारीक स्पन्दनों को भी अंकित कर लेने में सक्षम उस मानस की धड़कनों और अंकनों का वैरोमीटर है जिसका निर्माण विशिष्ट प्रकार की शक्ति, विवेक, क्षमता एवं शक्ति ने मिलजुल कर किया है। यही कारण है कि इन कहानियों में जिन्दगी पुनः कथित नहीं हुई है- पुनर्जीवित हुई है।

डॉ0 शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में चरित्र और कथ्य के सानुपातिक समायोजन पर बल दिया गया है। अपने अस्तित्व को उबारने के लिए विविध क्षेत्रों में विरोधी शक्तियों से जूझते मनुष्य और उसकी जिन्दगी के प्रति इनका लगाव 'कर्मनाशा की हार' कहानी से स्पष्ट होता है जहाँ वह अंधविश्वास, उपेक्षा, विवशता, प्रताड़न, अतृप्ति, शोषण, राजनीतिक भ्र्रष्टाचार के नीचे पिसता हुआ भी अपने सामाजिक और वैयक्तिक हक के लिए लड़ता है, हँसता है, रोता है बार-बार गिरकर भी जो अपने लक्ष्य से मुँह नहीं मोड़ता जो अपनी शारीरिक सीमाओं और मानसिक दुर्बलताओं में महान है।"[8] विद्रोह की वाणी हम इनकी अन्य कहानियों 'पापजीवी' और 'उपहार' में भी पाते हैं। पाप जीवी शीर्षक कहानी में उपेक्षित

मुसहर जाति के यायावरी कबीले की दो पीढ़ियों के दर्द का अच्छी तरह उभारा गया है। इस कहानी के संदर्भ में लेखक स्वयं कहता है- पाप जीवी में मेरी कोशिश यही रही है कि पूरे कबीले का जीवन एक झलक में ही सामने आ जाय। कुछ जातियाँ लगातार शोषण करती रही है एक पीढ़ी में वे जमींदार थे और दूसरी में ठेकेदार। दोनों पीढ़ियों के अत्याचार के रूप में अन्तर है, अत्याचार में अन्तर नहीं .... अज्ञेय जी को यह कहानी इतनी पसन्द आयी थी कि उन्होंने क्रिमिनल नाम से इसका अनुवाद करके वाक् में छापा था।[9] उपहार कहानी में गुलाबी अपनी दयनीयता के बावजूद जमींदार के दोहरे शोषण (आर्थिक, शारीरिक) के खिलाफ बगावत करती है।

'हाथ का दाग' कहानी में आधुनिकता का परिचय देते हुए पति अपनी पत्नी से शरीर का सौदा करके आजीविका कमाता है, निजता की खोज या मै की तलाश के रूप में डॉ0 शिवप्रसाद सिंह का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है यह भी कहा जा सकता है कि इनका पूरा कहानी लेखन ही चरित्रो के माध्यम से भारतीय व्यक्तियों की खोज है। इसी को कमलेश्वर ने 'केन्द्रीय व्यक्ति की तलाश' का नाम दिया है। शिव प्रसाद सिंह की कहानियों का प्रत्येक पात्र अपने वर्ग की विशेषताओं को रखते हुए भी अपनी कुछ निजी विशेषताएँ रखता है। इनकी कहानियों में दीन-हीन गरीब, अंध विश्वासी पर मानवीय स्नेह और प्रकृत्ति की सुषमा सें गमकते, निर्बल, दुःखी पर आत्मवान, हर तरह के लोक जीवन की धुनी से जुड़े संघर्षतर इंसान है- हीरो की खोज के बोधन तिवारी, देऊ दादा 'दादी मॉ, उपधाइन मैया कर्ज का जगपति, पैटमैन का सिजोगी, गंगा तुलसी की माँ' कलंकी अवतार के रोपन आदि ने अपने समाज के आर्थिक और नैतिक रूप से प्रताड़ित दलित, बुझें और टूटे हुए पालों को ही सहानुभूति और संवेदना दी थी।

शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में केन्द्रीय पात्रों का यह रूपायन वास्तव में पात्रों की तलाश नही थी, वरन् यथार्थ की तलाश थी इनकी कहानियों का यथार्थ उनका ग्रामीण परिवेश नहीं है वरन् उनके प्राण में निहित संस्कार जन्य मानसिकता के दोहन से उत्पन्न वह त्रासद स्थिति है जिससे इन कहानियों के चरित्र निर्मित होते हैं। माटी की औलाद, खैरा पीपल कभी न डोले, अंधकूप आदि ऐसी कहानियाँ हैं जिनमें विशुद्ध सामाजिक यथार्थ की तस्वीर बन पड़ी है।

डॉ0 शिवप्रसाद सिंह ने अपने ग्रामीण परिवेश में व्याप्त कुरीतियों, रूढ़िगत, रीति-रिवाजों के अंधानुकरण का जोरदार विरोध किया है। 'रेती' की गंगा माँ की 'नन्हों' की नन्हों सहुआइन में जहाँ यह विरोध शालीनता लिये है, 'भग्न प्राचीर' की सुशीला में दृढ़ता और कर्मनाशा की हार के भैरो पाण्डेय में विचारोतेजकता, वही पोशाक की आत्मा में किसी भी मान्यताओं से पोषित परम्परावाद को नष्ट करने के लिए अंगारक लावों की तरह उबल पड़ता है और आदिम हथियार में तो विरोध बेपरवाही व उपेक्षा के साथ ठेंगा दिखाकर निकल जाता है। इस प्रकार नयी कहानी के परम्परावाद के अस्वीकार की आवाजों में ये कहानियाँ एक बुलंदी लाकर अविरमरणीय योगदान की भूमिका अदा करती है।

जमींदारों की निन्दा धार्मिक कृत्यों की खिल्ली शिवप्रसाद सिंह ने अनेक कहानियों में उड़ायी है। समाज के उपेक्षित लोगों डोम, मुसहरों, कुजड़ों, चमारों भंगी, नट, वेश्या आदि को अपने कहानियों का पात्र चुना है। इस दृष्टि से 'इन्हें इंतजार है', 'पापजीवी', 'रेती', 'विन्दा महाराज', 'बेहया' इनकी सशक्त कहानियों में उल्लेखनीय है। कोबरी डोमिन है, पर मांगने में लाज आती है। मगरू में भी आकांक्षा है अपने स्तर से ऊपर उठाने की, पर क्या करे क्या? स्टेशन पर गोदाम में झारी करने के लिए भी हमें कोई नहीं पूछता। मुसहर, चमार, गरीब है सही, पर उन्हें करने को नीचा-ऊँचा काम तो मिल जाता है, हम कहाँ जाये सरकार। हमारी देह में तो ऐसी छूत भरी है कि कोई गोबर-खाद फेकने का काम भी नहीं करने देगा। इस कथ्य में मात्र संवेदना की ही नहीं दृष्टि की जीवंत धारा है। धारा और रेती कहानियाँ भी इसी प्रकार की है। जिनमें उन उपेक्षितों की जो इकाई का जीवन जीते, भरे पूरे जीवन की धारा में नदी किनारे पर छोड़ दिये गये हैं और जिनकी व्यथा पीड़ा ही साकार

हुई है। इसी बिन्दु पर ये कहानियाँ आधुनिकता का प्रमाण भी प्रस्तुत करती है। इन कहानियों में पात्रों की गढ़न और तराश के पीछे शरतचन्द्र और हजारी प्रसाद द्विवेदी के प्रभाव को भी आसानी से पकड़ा जा सकता है। चाहे यथार्थ का चित्र हो या परम्परावाद का विरोध, परिवेश ग्रामीण हो या नगरीय पर पात्रों के माध्यम से लेखक की जीवन के प्रति आस्था व प्रतिबद्धता नयी कहानी का प्रमुख स्वर है। यही आस्था शिवप्रसाद जी के कहानियों की प्रेरणा शक्ति है। विभिन्न जीवन संदर्भों में भी यह आस्था अडिग रहती है मंजिल और मौत में बौड़म की जिजीविषा इसका ज्वलंत उदाहरण है। बुॅला, दादी-दादा, कबूतरों का अड्डा, का माँ आदि तो है ही, पर परिस्थितियों की भयंकर मार से टूटे 'उस दिन तारीख थी' के देवी सिंह 'चितकबरी' के रोपन साहु उसकी भी चिट्ठी आयी थी के विमल सिंह, बिन्दा महाराज, पर कटी हुई तितली की रानी, खैरा पीपल कभी न डोले का कैरा, अंधेरा हँसता है के अर्जुन पाण्डेय चेन का रिक्शावान, धरातल की मुसम्मता नैना आदि अनेक लोग इसी आस्था के कारण जीवन से बेतरह जुड़े हुए लोग हैं। क्योंकि लेखक को स्वयं मनुष्य और उसकी जिन्दगी के प्रति मोह है, अपने प्रयत्न के प्रति आस्था है।

'टूटे शीशे की तस्वीर' एक अन्य कहानी में अन्तर्वैयक्तिक सम्बंधों को नागरिक संश्लिष्ट संकुलता के परिपेक्ष में उभारा गया है जहाँ गहरी टूटन है। ग्रामीण परिवेश में शोषण के प्रमुख स्वर जमींदारना सम्बंधों की ओर संकेत करते हैं। माटी की औलाद में जमींदारी-प्रथा समाप्त हो जाने पर भी जमींदारना अंदाज उसी तरह कायम है। रामसुभम तिवारी गाँव के जमींदार जब टीमल को पता चला कि महीने दिन की मजदूरी छः रूपये है। टीमल की पुरानी आँखों से ढलक कर दो बूँद आँसू सरजू के भीगे गालों पर पड़े नारी के शोषण के दो रूप में दिखायी देते हैं। एक सेक्स के धरातल पर, दूसरे अर्थ के इस स्वरूप को अंधकूप केवड़े का फूल और हाथ का दाम कहानियों में देख सकते हैं।

शिवप्रसाद सिंह ने गाँव को सहज आत्मीयता से परखा है। उसके बदलते स्वरूप को मूलाधार में पहचाना है। शिवप्रसाद सिंह की नन्हों कहानी में ग्रामीण परिवेश को लेकर नन्हों को स्वीकार और अस्वीकार के द्वन्द्व को चित्रित किया गया है। नन्हों का विवाह नन्हों के देवर रामसुभग को वर के रूप में दिखाकर बूढ़े पंगु व्यक्ति से कर दी जाती है। रामसुभग नन्हों को अपनाना चाहते हैं, उसके प्रति अनुरक्त होने के बावजूद नन्हों पारम्परिक संस्कारों के कारण उसे पति के रूप में स्वीकार नहीं कर पाती।

पीढ़ीगत तनाव को लेकर नये कथाकारों ने अनेक कहानियाँ लिखी शिवप्रसाद सिंह की 'बेहया' कहानी में द्वन्द्वशील स्थिति का निरूपण है। कामता नाथ और उसका बाप दोनों सुभागी के घर का चक्कर लगाते हैं। कामतानाथ अपने पिता से लड़ता है और गृह त्याग कर देता है।

शिवप्रसाद सिंह की कहानियाँ अधिकांशतः मन प्रवृत्तियों के विवेक को निर्णयात्मक में ही जीती है, पर कई स्थलों पर ये चित्र एक यथार्थ का रूप ले लेते हैं। ये कहानियाँ वास्तव में सहज यथार्थ बोध की कहानियाँ हैं। उनकी कहानियों में खुले मैदान का विस्तार और पोषण है। उनमें जीवन के जिन मार्मिक प्रसंगों को चुना गया है। उससे भारतीय अभिशप्त जीवन की यह हकीकत कितनी पीड़ाजनक मालूम होती है। रेती कहानी बन्ध्या नारी के अभिशप्त जीवन का मार्मिक प्रतीक बन कर उभरती है अरून्धती कहानी झूठे, दम्भी और रूढ़ समाज की मृत्यु के संकेत को उभारती है। इसी प्रकार एक यात्रा सतह के नीचे में समाज की अर्थहीन मान्यताओं और रूढ़ियों के प्रति विरोध एवं विद्रोह का तीखा भाव है।

भारतीय समाज के इस उत्पीड़न वर्ग में बहुत भिन्न स्थिति स्त्री की नहीं है। 'केवड़े' के फूल की अनिता इसी स्त्री वर्ग की प्रतिनिधि पात्र है। स्वयं पति द्वारा सार्वजनिक सम्पत्ति बनाये जाने का विरोध करने वाली अनिता के पति के लिए रखैल

रख लेने की उदारता दिखाने का उपदेश उसके पिता ही उसे देते हैं। पति से अपमानजनक पत्र पाकर भी अपने निर्णय पर अमल कर पाने की स्वतंत्रता उसे नहीं है।

आंचलिकता की अवधारणा एक तरह से क्षेत्रीयता की समीपी अवधारणा है। यद्यपि क्षेत्र विशेष की पहचान किसी वृहत्तर प्रान्त अथवा देश के संदर्भ में व्यक्त हुआ करती है। आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी में 'रीजन' शब्द का प्रयोग हुआ है। रीजन का अर्थ यहां भूमि का एक बड़ा भाग, देश, किसी सीमा तक परिभाषित पृथ्वी की सतह का भाग जो कुछ विशेष प्राकृतिक रूपों, जलवायु सम्बंधी दशाओं, जीव वनस्पति आदि के कारण विशिष्टता रखता है।[10]

अमेरिकन कालेज एनसाइक्लोपीडिक डिक्शनरी में रीजन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए उसे शहर या राज्य का प्रशासनिक विभाग कह कर परिभाषित किया गया है।[11] कहीं-कहीं क्षेत्र का आधार भौगोलिक न होकर प्रशासनिक, आर्थिक, व्यापारिक अथवा औद्योगिक हुआ करता है। स्पष्ट है कि क्षेत्र शब्द से व्यक्त होने वाली अवधारणा एक व्यापक अर्थ व्यंजना रखती है व इसके फलस्वरूप एक परिभाषिकता ग्रहण करने के बाद वह उतनी सघन अर्थगर्भित इकाई नहीं जितनी कि अंचल है।

आंचलिकता की जो पहचान हुआ करती है वह स्थूल भौगोलिकता से अधिक सूक्ष्म सामाजिक सांस्कृतिक स्तर पर अपने को व्यक्त करती है, परन्तु क्षेत्रीयता का आधार मुख्यतः स्थूल, भौतिक ही हुआ करता है सच यह है कि आंचलिकता जिस रूप में समझी जाने लगी है, कतिपय वर्षों पूर्व उसे क्षेत्रीयता के अर्थ में भी पुकारा जाता था। एक साहित्यिक आन्दोलन के पूर्व जिस प्रत्यय को मूर्त किया है उसकी एक अर्थ गुम्फित सत्ता प्रकट होती है। क्षेत्रीयता को कभी भी वह गौरव और सूक्ष्मता नहीं प्राप्त हो सकती जो आंचलिकता को प्राप्त हुई है।

किसी प्रदेश को विभिन्न क्षेत्रों में विभाजित करने का आधार अन्ततः स्थूल भौतिकता, भौगोलिकता के लिए होता है। हम क्षेत्र विशेष की उस स्थूल पहचान से दूसरे क्षेत्र से उसकी पृथकता तय करते हैं। एक तरफ से दोनों क्षेत्रों में पृथकता का आधार भूमि का आकार, पर्वत श्रृंखलताएं, नदी और समुद्रों का विस्तार, खनिज, फसल, जलवायु का अंतर आदि हुआ करता है। कभी-कभी इस प्रकार की भौगोलिक पृथकता से किसी क्षेत्र विशेष के प्रशासनिक विकास की जो सुविधाएं प्राप्त होती है, धीरे-धीरे वे भी दो क्षेत्रों में विभाजन का आधार बनती है। कुल मिलाकर क्षेत्र और क्षेत्रीयता से जुड़ा हुआ आशय अपनी स्थूल भौगोलिक और भौतिक स्वरूप की व्यंजना करता है। जबकि अंचल और आंचलिकता की पहचान उसकी सांस्कृतिक इकाई होने में है। प्रदेश एक भौगोलिक या राजनैतिक इकाई होता है, अंचल एक सामाजिक सांस्कृतिक इकाई।[12]

क्षेत्रीयता और आंचलिकता के इस अलगाव से पूर्व एक बात की ओर संकेत करना आवश्यक प्रतीत होता है। विकास की अवधारणा किसी स्थान विशेष को किन्हीं आधारों पर अविकसित, विकासशील अथवा विकसित की श्रेणियों में विभाजित करती है। यह ध्यान देने की बात है, उसका अर्थ सिर्फ आर्थिक और औद्योगिक स्तर तक ही सीमित होता है। जब हम आंचलिकता के संदर्भ में विकसित और अविकसित की बात करते हैं तो यहाँ आशय कुछ और गहन एवं सूक्ष्म हुआ करता है। किसी अंचल का पिछड़ा या अविकसित होना सिर्फ उसके आर्थिक औद्योगिक स्तर पर पिछड़ा व उन्नत होने में ही नहीं है बल्कि उसे लोक मानस में अशिक्षा, अंधविश्वास प्रथाओं और रीति-रिवाजों, मान्यताओं और आदर्शों का जो मिला-जुला स्वरूप होता है, वह भी अंचल और क्षेत्र के बीच की भेदक रेखा बन जाता है। कोई भी लोक संस्कृति विभिन्न प्रकार से दूसरी लोक संस्कृति से अपने विश्वास, आस्थाएं, रीति-रिवाज, मूल्यों आदि में ही भिन्न नहीं होती है। यह विशिष्ट छवि ही क्षेत्रीयता को अंचल से भिन्नता प्रदान करती है। आगे हम विभिन्न रचनाकारों की रचनाओं के माध्यम से इस विषय का विशद वर्णन करेंगे।

बारीकी से विचार करने पर क्षेत्रीयता और आंचलिकता में अन्तर दृष्टिगोचर होता है। क्षेत्रीयता में लोक जीवन की गहराई समाहित रहती है जबकि स्थानीय रंग में एक सतही अन्तर का प्रयास होता है। किसी परिवेश के चित्रण में वहां की बोली, भंगिमा, बानगी, वेशभूषा, लहजा और अन्य समान विशेषताओं का शिल्पगत चातुर्य आंचलिकता है। इस प्रकार क्षेत्रीयता से हटकर आंचलिक आन्दोलन अपने में बहुत कुछ कौतूहल प्रदर्शन और एक अनूठे चमत्कार और शैलीगत प्रयोग के रूप में अपने को प्रकट कर सका है। हिन्दी कथा साहित्य का इतिहास यद्यपि काल की दृष्टि से बधा ही है। पर समग्र कथा साहित्य पर दृष्टिपात करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि आंचलिकता की प्रवृति कोई नवीन नहीं, अत्यन्त प्राचीन प्रवृत्ति है। आदिम मानव में भी यह प्रवृत्ति निहित थी और परिस्थितियों के अनुरूप ही इस प्रवृति में परिवर्तन होता आया। हिन्दी कथा साहित्य में उपन्यास विधा का स्थान महत्वपूर्ण है और आंचलिक उपन्यास में हम एक ज्ञात लेकिन स्वानुभूत जीवन की प्रत्यक्षवत् झाँकी पाते हैं। कहानी तथा नाटक आदि में घटनाओं का घात- प्रतिघात तथा अन्तर्द्वन्द्व का जैसा मनोरम रूप पाते हैं उपन्यास में और भी इसके अतिरंजित रूपों का परिदर्शन होता है। मानव जीवन की सही व्याख्या आंचलिक कथा साहित्य जीवन की परिपूर्णता का सच्चा प्रयास है।

ग्राम कथा के क्षेत्र में शिवप्रसाद जी का आगमन 'रेणु' के पूर्व ही हो गया था। ग्रामीण जन-जीवन में अत्यन्त गहरी पैठ और सूक्ष्माति-सूक्ष्म रेखाओं को भी उभारने की शक्ति शिवप्रसाद सिंह में थी।

शिवप्रसाद सिंह ने "दादी माँ" कहानी में पारिवारिक सम्बंधों की जटिलता को बड़ी सार्थकता के साथ प्रस्तुत किया है। वे ग्रामीण जीवन को अनेक भिन्न चित्रों के माध्यम से उसे उनकी पूर्णता में चित्रित करना चाहते हैं, यही कारण है कि- "दादी माँ, वशीकरण, शंखामृग और 'खैरा पीपल कभी न डोले' में उनके दृष्टिकोण का वैषम्य बड़ी आसानी से देखने को मिलता है। इनकी कहानियों में परिस्थितिजन्य पारिवारिक एवं सामाजिक वेदना, तनाव, विवशता, हार तथा लाचारी के बड़े ही प्रभावोत्पादक चित्र देखने को मिल जाते हैं। इनकी कहानियों में भाषा का जैसा संयमित प्रयोग शिवप्रसाद जी की कहानियों में मिलता है, वैसा कम लोगों में पाया जाता है।

श्री शिवप्रसाद सिंह ने लिखा है- "जैसा कि इस शब्द से स्पष्ट है, यह भाव-संज्ञा किसी क्षेत्र या अंचल से संबद्ध है। क्षेत्र या अंचल उस भौगोलिक खण्ड को कहते हैं जो सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से सुगठित और विशिष्ट एक ऐसी इकाई हो जिसके निवासियों के रहन-सहन, प्रथाएँ, उत्सवादि, आदर्श और आस्थाएँ, मौलिक मान्यताएँ तथा मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ परस्पर समान और एक दूसरे क्षेत्र के निवासियों से इतनी भिन्न हो कि इनके आधार पर यह क्षेत्र. या अंचल विशेष इसी प्रकार के दूसरे क्षेत्र से एकदम अलग प्रतीत हो। इस प्रकार के अंचल या क्षेत्र के जीवन को अभिव्यक्त करने वाली रचना को हम आंचलिक कह सकते हैं।[13]

डॉ0 शिवप्रसाद सिंह ने आंचलिक कथा और ग्राम कथा के अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि प्रायः स्थानीय रंग को भ्रम से आंचलिकता का यथार्थ मान लिया जाता है। वे स्थानीय रंग को आंचलिकता से ऊपर की वस्तु मानते हैं। स्थानीय रंग ग्राम जीवन से भिन्न होता है, नगर जीवन से भी। कोई भी लेख, चाहे उस धरती पर उत्पन्न हो अथवा न हो थोड़े से परिचय के आधार पर वह वहाँ का स्थानीय रंग ले सकता है। यदि देखा जाय तो वातावरण तत्व के अन्तर्गत बहुत से लेखक की रचनाओं कथ्यगत परिवेश-प्राकृतिक, वेशभूषा, बोली, रूचियों-अभिरूचियों के रूप में स्थानीय रंग उभरते हैं। उदाहरण स्वरूप हम गुलेरी जी की 'उसने कहा था' कहानी को ले सकते हैं। कहानी के प्रारम्भ में अमृतसर बाजार का चित्रण बड़े विस्तार से किया गया है, लेकिन उसमें स्थानीय रंग प्रधान है। स्थानीय रंग और आंचलिकता का निर्धारण लेखकीय दृष्टिकोण और कथ्य के उद्देश्य से होता है। स्थानीय रंग आंचलिक कथा में प्रभूत होता है, बल्कि आंचलिक

तत्वों में एक प्रधान तत्व ही आंचलिक 'स्थानीय रंगत' है। यह गाँव की कहानी में हो सकता है साथ ही नगर की कहानी में भी। प्रेमचन्द की बहुत सी कहानियों में स्थानीय रंग का प्राचुर्य है, इसी से कतिपय समीक्षक उन्हें आंचलिक कथाकार और उनके गोदान को आंचलिक उपन्यास मान लेने की त्रुटि कर बैठते हैं।

शिवप्रसाद सिंह की कहानियों में उतर प्रदेश के पूर्वी गाँवों, रीति-रिवाज, स्थानीय भाषा, कहावतों एवं लोक सांस्कृतिक तत्वों के निरूपण द्वारा साकार हुए हैं। साधु-सन्तों, पेशेवर समुदायों, वेश्याओं आदि के रहन-सहन, वेशभूषा, मनोरंजन के साधन और बोली-बानी के व्यवहार के चित्रण के व्यवहार के चित्रण में स्थानीय रंग का लेखकों ने भरपूर अंकन किया है। उत्तर प्रदेश के पूर्वी अंचल पर आधारित शिवप्रसाद की कहानियों में जनपदीय परम्पराओं, विश्वासों एवं वातावरण का तथा धार्मिक पर्वों, आचार-व्यवहार, कुरीतियों और कर्मकाण्डों का यथार्थ चित्र अंकित है। यत्र-तत्र भौगोलिक और प्राकृतिक वातावरण द्वारा भी स्थानीय वैशिष्ट्य रेखांकित है।

इस प्रकार उपयुक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि डॉ0 शिवप्रसाद सिंह जी की कहानियों में अनुभव की सच्चाई और अनुभूति की गहराई इनके कथ्य की मुख्य विशिष्टता है। वस्तुतः इनके भीतर अनदेखे को देखने की अद्भुत शक्ति है तभी तो उन्होंने चरित्रों की परत दर परत उभरती श्रृंखला और कहानी में संकेतिक करते जाने में सफलता हासिल की है। सर हेनरी जेम्स का कथन इस पर पूर्णरूप से लागू होता है। अनुभव कभी सीमित नहीं होता और न कभी पूर्ण। यह संवेदना का विराट मकड़ी जाल है, जो चेतना के कक्षा में बारीक सिल्क के रेशों से बना हुआ लटक रहा है जो अपने तन्तुओं में वातावरण में उड़ने वाले हर बारीक से बारीक कण को पकड़ लेता है।

संदर्भः

1. डा0 शिवप्रसाद सिंह, मेरी प्रिय कहानियाँ, की भूमिका।
2. डॉ0 बच्चन सिंह, समकालीन हिन्दी साहित्य: आलोचना की चुनौती, पृ0 111
3. डॉ0 बच्चन सिंह, समकालीन हिन्दी साहित्य: आलोचना की चुनौती, पृ0 111
4. सत्य नारायण तिवारी: युग धर्म, नागपुर, 27 मई, 1962
5. शिव सहायक पाठक नवनीत, अगस्त, 1962
6. वही
7. डॉ0 विवेकी राय: स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्राम्य जीवन, पृ0 158
8. कर्मनाशा की हार, विकल्प पृ0 6
9. सारिका, 1 फरवरी, 1980, पृ0 12
10. आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी, वो0 8, पृ0 371
11. द अमेरिकन कालेज एनसाइक्लोपीडिक डिक्शनरी, वो0 7, पृ0 1020
12. हिन्दी के आंचलिक उपन्यास और उनकी शिल्प विधि: डॉ0 आदर्श सक्सेना,पृ0 29
13. शिवप्रसाद सिंह, आँचलिक और आधुनिक परिवेश, कल्पना मार्च 1965 ई0 पृ0 26